International Journal of Advanced Academic Studies 2022; 4(4): 178-180

E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2022; 4(4): 178-180
Received: 16-10-2022
Accepted: 23-11-2022

डॉ० अभिमन्यु कुमार
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह महाविद्यालय, सरिसब–पाही, मधुबनी, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ० अभिमन्यु कुमार
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, महाराज लक्ष्मीश्वर सिंह महाविद्यालय, सरिसब–पाही, मधुबनी, बिहार, भारत

दलित अस्मिता की अवधारणा

डॉ० अभिमन्यु कुमार

प्रस्तावना

दलित समुदाय को जब लगता है कि हिंदू समाज से हम अलग हैं और हिंदू व्यवस्था में हमारी निम्न परिस्थिति है तो यहीं से दलित अस्मिता का निर्माण होना शुरू हो जाता है। हिंदू समाज से पार्थक्य का ज्ञान ही दलितों में अस्मितामूलक विचार पैदा करता है। इस प्रकार दलित अस्मिता का निर्माण हिंदू व्यवस्था के भीतर से ही होता है। वरिष्ठ समाज विज्ञानी घनश्याम शाह लिखते हैं कि, ''जब कोई समुदाय अपने अस्तित्व और भूमिका को समझने की समस्याओं से जूझता हुआ अपने–आपसे सवाल करता है कि 'हम कौन हैं और दूसरे समुदायों के मुकाबले हमारी समाज में क्या हैसियत है' या 'हम किस तरह दूसरों से संबंधित हैं' तो उसकी पहचान बनने की प्रक्रिया शुरू होती है।''[1] फुले, पेरियार और अम्बेडकर ने भारतीय जाति–व्यवस्था के घोर अमानवीय व्यवहार की सिर्फ निंदा ही नहीं की है बल्कि इसे शूद्र के नाम पर मनुष्यों की प्रताड़ना को एक दैवी आधार प्रदान करने का प्रयास बताया। 'मनुस्मृति' आदि ग्रन्थों में शूद्रों के लिए सामान्य मानवीय जीवन की इच्छा प्रकट करने पर जो भयंकर दण्ड–विधान की व्यवस्था की गई है, इसे अनुचित कहा। वेदों, उपनिषदों आदि हिंदू धार्मिक ग्रन्थों में 'शूद्र' को जन्म से व अच्छे–बुरे कर्मों के फल से जोड़कर देखने का जो तर्कहीन विचार आज तक हिंदू समाज के बड़े हिस्से में बद्धमूल है, इसका उन्होंने खंडन किया। इन चिंतकों ने न सिर्फ भारतीय जाति–व्यवस्था का विरोध किया अपितु इसके अमानवीय व्यवहार से लोगों को परिचित भी कराया। अम्बेडकर ने आंदोलनों के माध्यम से दलितों में जन–जागृति लाने के साथ ही उन्हें अपने अधिकारों के प्रति सचेत भी किया। दलितों के भावी भविष्य के निर्माण के लिए इन्होंने अतीत–रचना और अस्मिता निर्माण जैसे महत्वपूर्ण कार्य भी किये। वेदों और धर्मशास्त्रों के आधार पर अम्बेडकर ने निष्कर्ष निकाला कि शूद्र पहले कभी क्षत्रिय थे। इसी प्रकार फुले ने राजा बलि के मिथकीय इतिहास का सहारा लेकर दलितों को गर्व करने लायक इतिहास देने का प्रयास किया था। अभय कुमार दुबे ने अपने लेख 'नये शहर की तलाश' में अम्बेडकर द्वारा मराठी में लिखी गयी तीन पंक्तियों का जिक्र किया है। ये पंक्तियाँ मराठी से अंग्रेजी और उसके बाद फिर हिन्दी में अनूदित हुई हैं, फिर भी प्रभावशाली लगती हैं–

- हिन्दुओं को चाहिए थे वेद, इसलिए उन्होंने व्यास को बुलाया जो सवर्ण नहीं थे।
- हिन्दुओं को चाहिए था एक महाकाव्य, इसलिए उन्होंने वाल्मीकि को बुलाया जो खुद अछूत थे।
- हिन्दुओं को चाहिए था एक संविधान, और उन्होंने मुझे बुला भेजा।[2]

अम्बेडकर की उपरोक्त पंक्तियाँ दलितों को उनके गौरवपूर्ण अतीत की याद दिलाती है कि वे कला और संस्कृति के मूल रचयिता हैं। वे दलितों में जागरण लाने के लिए उनके गौरवपूर्ण इतिहास की रचना करते हैं। वह दलितों को वर्तमान गुलामी की बेड़ियाँ तोड़ने के लिए ललकारते हैं ताकि अतीत के बरक्स भविष्य का निर्माण किया जा सके। इस प्रकार हम देखते हैं कि अतीत, वर्तमान और भविष्य के बीच बनाया गया संबंध दलित अस्मिता के निर्माण में सहायक होता है। परंपरा में जो रूढ़ियाँ हैं, उसकी भी शिनाख़्त उपर्युक्त सुधारकों ने की है। इन्होंने भारतीय धर्म और संस्कृति को अपनी आलोचना का आधार बनाकर दलित अस्मिता का निर्माण किया। भारतीय समाज व्यवस्था से ये अपने को अलगाते हैं क्योंकि इस व्यवस्था में दलितों को पीड़ा और अवमानना के अलावा कुछ नहीं मिलने वाला। दलितों में चेतना लाने के उद्देश्य से ही दलित अस्मिता का निर्माण किया जाता है। अस्मिता का बोध होने पर अधिकार का भाव पैदा होता है। यही बात दलितों के साथ भी है। जब उन्हें पता चलता है कि समाज में अन्य लोगों की अपेक्षा उनकी निर्मम स्थिति है तब वे अपने अधिकारों के प्रति सजग हो जाते हैं। आगे चलकर दलित साहित्यकारों और आलोचकों ने दलित अस्मिता को मजबूत आधार देने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। सुविख्यात मराठी दलित साहित्यकार डॉ. गंगाधर पानतावणे 'दलित' शब्द को व्याख्यायित करते हुए लिखते हैं– ''दलित क्या है? 'दलित' कोई जाति नहीं बल्कि परिवर्तन और क्रांति का प्रतीक है।

दलित मानवतावाद में विश्वास करता है। परंतु वह ईश्वर के अस्तित्व, पुनर्जन्म, आत्मा तथा उन तथाकथित धार्मिक ग्रंथों को अस्वीकार करता है जो भेदभाव की शिक्षा देते हैं। वह भाग्य तथा स्वर्ग की अवधारणाओं को भी अस्वीकार करता है, क्योंकि ये ही विचार उसको दासत्व का बोध कराते रहे हैं। वह इस देश में दबाए सताए हुए समाज का प्रतिनिधित्व करता है, जो वर्षों से जानवर से भी बदतर जिंदगी जीने को अभिशप्त हैं। वह विरोध करता है एक बहुत ही सूझ–बूझ के साथ विकसित की गई हिंदू सामाजिक–व्यवस्था का जिसने कि मानव के रूप में उसके अस्तित्व को कभी स्वीकार ही नहीं किया तथा मानवीय गरिमा का निरंतर निरादर किया गया। जिसके मृत प्रायः शरीर को पीड़ा और वेदना का संत्रस झेलना पड़ा। यही अलगाववाद का बोध उन हजारों दलित के पुनर्जागरण का अक्षय स्रोत है।''[3] पानतावणे हिंदू समाज व्यवस्था से दलितों को अलगाते हैं। उनके अनुसार हिंदू के धार्मिक ग्रंथ ही उनके शोषण का आधार हैं। इसलिए वे ईश्वर के अस्तित्व, पुनर्जन्म, आत्मा आदि को नकारते हैं। भारतीय समाज व्यवस्था में 'दलित' सताए हुए समाज का प्रतिनिधित्व करता है। दलितों की यही पीड़ा आगे चलकर परिवर्तन और क्रांति का कारण बनेगा। कंवल भारती का मानना है कि– ''दलित वह है जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है। जिसे कठोर और गन्दे कार्य करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया और जिस पर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की, वही और वही दलित है, और इसके अंतर्गत वही जातियाँ आती हैं, जिन्हें अनुसूचित जातियाँ कहा जाता है।''[4] उपर दी गई परिभाषा से स्पष्ट है कि भारतीय समाज में दलितों को मानव अधिकार से वंचित रखा गया। वे हजारों सालों से समाज के हाशिये पर रहते आये हैं। उन्हें समाज में किसी तरह का कोई अधिकार या स्वतंत्रता प्राप्त नहीं थी। दलितों का कार्य सिर्फ भारतीय जाति–व्यवस्था में उपर के तीन वर्णों की सेवा करना था जिसके कारण वे सदियों से उपेक्षित होते आये हैं। मोहनदास नैमिशराय 'दलित' शब्द की व्याख्या करते हुए कहते हैं– ''दलित शब्द मार्क्स प्रणीत सर्वहारा शब्द के लिए समानार्थी लगता है लेकिन इन दोनों शब्दों में पर्याप्त भेद भी है। दलित की व्याप्ति अधिक है, तो सर्वहारा की सीमित। दलित के अन्तर्गत सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक शोषण का अन्तर्भाव होता है, तो सर्वहारा केवल आर्थिक शोषण तक ही सीमित है। प्रत्येक दलित व्यक्ति सर्वहारा के अंतर्गत आ सकता है, लेकिन प्रत्येक सर्वहारा को दलित कहने के लिए बाध्य नहीं हो सकते... अर्थात् सर्वहारा की सीमाओं में आर्थिक विषमता का शिकार वर्ग आता है, जबकि दलित विशेष तौर पर सामाजिक विषमता का शिकार होता है।''[5] नैमिशराय जाति को वर्ग की अवधारणा से अलग करते हैं। क्योंकि मार्क्स के वर्ग विभाजन में शोषण का वह रूप दिखाई नहीं देता जिससे आमतौर पर दलितों को प्रभावित होना पड़ता है। वरिष्ठ दलित चिंतक प्रो॰ श्यौराज सिंह 'बेचैन' के अनुसार– ''दलित वह है जिसे भारतीय संविधान ने अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है।''[6] अस्पृश्यता को आधार बनाकर भारतीय संविधान ने जिसे अनुसूचित जाति का दर्जा दिया है उसे ही वे दलित कहते हैं। इस तरह प्रो॰ श्यौराज सिंह 'बेचैन' दलित अस्मिता के लिए जातिगत अस्पृश्यता को केन्द्र में रखते हैं। यह धारणा उचित है, क्योंकि अस्पृश्यता के कारण ही दलित नित्यप्रति अवमानना के शिकार होते हैं। मराठी कवि नारायण सूर्वे लिखते हैं कि– '''दलित' शब्द की मिली जुली परिभाषाएँ हैं। इसका अर्थ केवल बौद्ध या पिछड़ी जातियाँ ही नहीं, समाज में जो भी पीड़ित हैं, वे दलित हैं।''[7] नारायण सूर्वे की धारणा के निकट ही हम शरण कुमार लिंबाले की दलित संबंधी व्याख्या को पाते हैं– ''सर्वप्रथम दलित साहित्य में 'दलित' शब्द की व्याख्या निश्चित करनी होगी। दलित केवल हरिजन और नव बौद्ध नहीं। गाँव की सीमा से बाहर रहने वाली सभी अछूत जातियाँ, आदिवासी, भूमिहीन खेत मजदूर, श्रमिक कष्टकारी जनता और यायावर जातियाँ सभी के सभी 'दलित' शब्द से व्याख्यायित होती है। दलित शब्द की व्याख्या में केवल जाति का उल्लेख करने से नहीं चलेगा। इसमें आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोगों को भी शामिल करना होगा।''[8] लिंबाले वर्ग की अवधारणा के ज्यादा निकट दिखाई देते हैं। वे दलित अस्मिता के दायरे में आर्थिक रूप से पिछड़े हुए लोगों को भी ले आते हैं। इसी के साथ ही वे दलित होने के लिए जाति की अवधारणा को भी अस्वीकार करते हैं। ओम प्रकाश वाल्मीकि की परिभाषा लिंबाले की अपेक्षा दलित अस्मिता के अर्थ को ज्यादा स्पष्ट करती है। उनके अनुसार– '''दलित' शब्द का अर्थ जाति–बोधक नहीं, बल्कि समुह की अभिव्यंजना देता है। सामान्य अर्थों में देखा जाये तो दलित वह है जो भारतीय समाज व्यवस्था में अस्पृश्य माना गया, दुर्गम पहाड़ियों, जंगलों में जीवन यापन करने को बाध्य जनजातियाँ, बेगार करते, कम मूल्य पर श्रम करते श्रमिक, जराय़म पेशा कही जाने वाली जातियाँ, बंधुआ मजदूर, वर्ण–व्यवस्था का अत्यंज, जिसका आर्थिक, शैक्षणिक, सामाजिक राजनीतिक, धार्मिक शोषण हुआ है, जो जन्मना अछूत है– वही दलित की परिधि में आता है।''[9] उपरोक्त लेखकों द्वारा की गयी 'दलित' शब्द की व्याख्या दलित अस्मिता के निर्माण में आधार का काम करती है। विभिन्न कालखंडों में दलित चेतना का विकास होता रहा है। भक्ति काल के कवियों में यह चेतना हमें चोखामेला और रैदास में दिखाई देती है। कालांतर में इस चेतना को हम एक संघर्षशील, बौद्धिक रूप में ज्योतिबा पफूले के अंदर पाते हैं। पफूले ने अपनी पत्नी सावित्री बाई पफूले के साथ समाज को रास्ता दिखाने का कार्य किया। ज्योतिबा फुले ने 1873 में 'गुलामगीरी' लिखकर ब्राह्मणवाद पर तीव्र प्रहार किया। इसी कालखंड में पेरियार, स्वामी अछूतानंद, नारायण गुरू, चांद गुरू और घासीदास हुए जिन्होंने अपने आंदोलनों से समस्त भारत में दलितों के अंदर चेतना लाने का कार्य किया। आगे चलकर अम्बेडकर के आंदोलनों में यह रूप और भी जुझारू रूप में दिखाई पड़ता है, जो दलितों को अपने अधिकार को पाने के लिए सीधी कार्यवाही करने का संदेश देती थी। व्यवस्था परिवर्तन की इस लड़ाई ने दलितों में एक नई चेतना का सूत्रपात किया। यही चेतना साहित्य की प्रेरणा बनकर दलित साहित्य के रूप में दिखाई देती है। जिसमें मुक्ति, स्वतंत्रता के गंभीर सरोकार मौजूद है। सही मायने में दलित अस्मिता का अर्थ होगा दलित के प्रति समाज के दृष्टिकोण और मानसिकता में बदलाव, तभी हम स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के मूल्यों की स्थापना भारत में कर पायेंगे और तभी जाकर बाबा साहब के सपनों का भारत साकार होगा।

संदर्भः

1. आधुनिकता के आइने में दलित, सं. अभय कुमार दुबे, पृष्ठ 195.
2. उद्धृत, वही, पृष्ठ 125.
3. What is Dalit? To me, Dalit is not a caste. Dalit is a Symbol of Change and Revolution. The Dalit believes in humanism. He rejects the existence of God, rebirth, Soul, Sacred books that tech discrimination, fate and heaven, because these have made him a slave. He represents the exploited men in his country. A very determined Hindu Social System was developed to destroy him as a human being. Human dignity was insulted and he fell prey to unavoidable circumstances. His lifeless body had to face the agony of pain, but the burden of alienation has been the source of rebirth for thousands of people. – Untouchable! voices of the Dalit Liberation Movement, Edited by Barbara R. Joshi, Page 79.

4. उद्धृत, दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृष्ठ 13.
5. वही, पृष्ठ 14.
6. वही, पृष्ठ 13.
7. वही, पृष्ठ 15.
8. दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, शरण कुमार लिंबाले, पृष्ठ 38.
9. दलित साहित्य की अंतः धारा और उसका सामाजिक यथार्थ, ओमप्रकाश वाल्मीकि, शब्दयोग, सितम्बर 2009, पृष्ठ 10.